Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 5.16/ March - April 2026 / VOL-02 ISSUE-V

23

नयी कविता में सामाजिक यथार्थ

प्रा. श्यामभाई सुरसिंग पवार
जी. टी. पाटिल कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविदयालय, नंदुरबार

प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में "नई कविता" एक महत्वपूर्ण काव्य प्रवृत्ति के रूप में उभरती है, जिसने न केवल काव्य के स्वरूप को बदला बल्कि उसके सरोकारों को भी व्यापक सामाजिक यथार्थ से जोड़ा। नई कविता का उद्भव ऐसे समय में हुआ जब समाज तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। परंपरागत मान्यताएँ टूट रही थीं, और उनके स्थान पर नई सामाजिक संरचनाएँ आकार ले रही थीं। इसी परिवर्तित संदर्भ में कविता ने भी अपने स्वर, शिल्प और विषय-वस्तु को बदला और जीवन के वास्तविक अनुभवों को अभिव्यक्ति देने का माध्यम बनी। कविता क्या है, इस प्रश्न का उत्तर समय-समय पर विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से दिया है। कविता को केवल भावों की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि मनुष्य और समाज के बीच संवाद का सशक्त माध्यम माना गया है। **इस संदर्भ में कहा गया है कि— "कविता मनुष्य से मनुष्य के सीधे साक्षात्कार का सर्वोत्तम माध्यम होना है"**1 यह कथन कविता की सामाजिक उपयोगिता को रेखांकित करता है। नई कविता ने इसी विचार को आगे बढ़ाते हुए मनुष्य के वास्तविक जीवन, उसकी समस्याओं, संघर्षों और संवेदनाओं को अपनी अभिव्यक्ति का केंद्र बनाया। नई कविता की पृष्ठभूमि को समझने के लिए हमें उसके ऐतिहासिक और साहित्यिक विकास को देखना होगा। छायावाद के पश्चात हिंदी कविता में जो परिवर्तन आया, उसने नई कविता के लिए आधारभूमि तैयार की। **इस संदर्भ में बालकृष्ण राव का मत उल्लेखनीय है— "छायावाद को 'नयी कविता' का उषःकाल अथवा छायावाद-कतिपय विशिष्ट काव्य प्रवृत्तियों का सामुहिक नाम है।"**2 अर्थात् नई कविता का विकास छायावाद की परंपरा से ही हुआ, लेकिन उसने उससे आगे बढ़कर अधिक यथार्थवादी और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपनाया। नई कविता शब्द के प्रयोग और उसके विकास को लेकर भी विद्वानों के मत महत्वपूर्ण हैं। **"नंदादुलारे बाजपेयी ने बहुत पहले बच्चन की कविता के लिए 'नया' विशेषण का प्रयोग किया था।"**3 तथा **" डॉ. केदारनाथ से सिंह सन 1936 से चली आती काव्य प्रवृत्ति को नई कविता की संज्ञा देने का श्रेय अज्ञेय को दिया है।"**4 इन कथनों से स्पष्ट होता है कि नई कविता कोई आकस्मिक घटना नहीं, बल्कि एक विकसित होती हुई साहित्यिक प्रक्रिया का परिणाम है, जिसमें अज्ञेय जैसे साहित्यकारों का विशेष योगदान रहा। नई कविता की पृष्ठभूमि सामाजिक परिवर्तनों से गहराई से जुड़ी हुई है। स्वतंत्रता आंदोलन, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, आधुनिक शिक्षा का प्रसार और लोकतांत्रिक चेतना के विकास ने समाज की संरचना को बदल दिया। इस परिवर्तन का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। **डॉ. शिव कुमार मित्र इस संदर्भ में कहते हैं— "नयी सामाजिक संस्थाओं, मजदूर, किसान एवं जनसाधारण के अन्य संगठनों, आधुनिक शिक्षा आदि अनेक कारणों से जाति-व्यवस्था का रूढ़िवादी भवन अपने आप से अब ढहता गया और अगर कुछ शेष बचा तो केवल बाह्य दिखावा मात्रा। रूढ़िवाद का आवरण उसमें जगह-जगह अवश्य चढ़ा रहा, पर उसके वास्तविक से आधारभूत परिवर्तन हो गये।"**5 यह कथन स्पष्ट करता है कि समाज में गहरे स्तर पर परिवर्तन हो रहे थे, और यही परिवर्तन नई कविता के विषय बने। इसी प्रकार सामाजिक चेतना के विखंडन और उसके दुष्परिणामों की ओर संकेत करते हुए कहा गया है— **"जब हम हीनतर मूल्यों के सन्दर्भ में अपनी प्रतिष्ठा का आधार विशेष जातीय मानदण्डों को मानने लगते हैं। हमारी सामाजिक चेतना खण्ड-खण्ड हो जाती है। इसमें लोक दृष्टि के स्थान पर एक रंगदृष्टि एक रक्त दृष्टि और नियति सूचक मनोवृत्तियों का विकास होने लगता है। यह विकसित राष्ट्रीय हित में सबसे बाधक सिद्ध होता है।"**6 इस प्रकार नई कविता केवल व्यक्तिगत भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि वह सामाजिक विघटन और उसके प्रभावों को भी सामने लाती है। अब यदि "सामाजिक यथार्थ" की अवधारणा पर विचार करें, तो यह साहित्य का वह पक्ष है जिसमें समाज के वास्तविक स्वरूप—उसकी समस्याएँ, संघर्ष, असमानताएँ और अंतर्विरोध—प्रतिबिंबित होते हैं। सामाजिक यथार्थ का अर्थ केवल बाहरी घटनाओं का चित्रण नहीं, बल्कि उन घटनाओं के पीछे छिपी हुई संरचनात्मक सच्चाइयों को उजागर करना भी है। **इस संदर्भ में कहा गया है— "समकालीन साहित्य का परिवेश अत्यन्त विशाल है। मानव जीवन को उसकी समग्रता में देखने की एक दृष्टि इसके अन्दर समाहित है। समकालीन जीवन-परिवेश समस्याओं की एक श्रृंखला से भरा हुआ है। एक ओर तो नव उपनिवेशवादी शक्तियाँ भूमंडलीकरण, उदारीकरण तथा निजीकरण के तन्त्र के तहत आदमी का शोषण कर रही हैं तो दूसरी ओर साम्प्रदायिकता पर्यावरण का दुरुपयोग, दलित एवं स्त्री विषयक उपेक्षा, वृद्ध जनों की समस्या जैसे अनगिनत सवाल समाज में बुलन्द हैं। समकालीन साहित्य इन्हीं समस्याओं से जूझने के लिए हमारी सृजनात्मक प्रतिभाओं से उत्पन्न प्रतिरोध का दस्तावेज़ है। समकालीन साहित्यकार दिखावनहार मात्र नहीं वह सक्रिय विद्रोही भी है।"**7 यह कथन स्पष्ट करता है कि सामाजिक यथार्थ एक व्यापक अवधारणा है, जिसमें आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और मानवीय सभी आयाम सम्मिलित होते हैं। नई कविता ने इन्हीं आयामों को अपनी अभिव्यक्ति का केंद्र बनाया। इसमें आम आदमी की पीड़ा, शहरी जीवन की समस्याएँ, सामाजिक असमानता, राजनीतिक विडंबनाएँ तथा अस्तित्व का संकट प्रमुख रूप से उभरकर सामने आते हैं। अतः कहा जा सकता है कि नई कविता हिंदी साहित्य की वह धारा है, जिसने कविता को जीवन के निकट लाकर खड़ा किया। यह कविता कल्पना लोक में विचरण करने के बजाय यथार्थ की कठोर जमीन पर खड़ी होती है। इसमें मनुष्य के

Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 5.16/ March - April 2026 / VOL-02 ISSUE-V

संघर्ष, उसकी विडंबनाएँ और उसकी जिजीविषा का सजीव चित्रण मिलता है। नई कविता में सामाजिक यथार्थ का अध्ययन न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह हमें अपने समय और समाज को समझने की भी दृष्टि प्रदान करता है। नई कविता हिंदी साहित्य की वह महत्वपूर्ण धारा है जिसमें व्यक्ति और समाज के बीच उत्पन्न तनाव, संघर्ष और विडंबनाओं को अत्यंत गहराई से व्यक्त किया गया है। यह कविता केवल भावों की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यथार्थ की ठोस जमीन पर खड़ी हुई संवेदनात्मक और वैचारिक चेतना का परिणाम है। इसमें आम आदमी की पीड़ा से लेकर अस्तित्वगत संकट तक, जीवन के विविध आयामों का सूक्ष्म और बहुआयामी चित्रण मिलता है।

1. आम आदमी की पीड़ा : नई कविता में 'आम आदमी' कोई स्थिर या सीमित पहचान नहीं है, बल्कि वह हर वह व्यक्ति है जो आधुनिक जीवन की जटिलताओं में उलझा हुआ है। उसकी पीड़ा केवल आर्थिक अभाव तक सीमित नहीं, बल्कि मानसिक, सामाजिक और अस्तित्वगत स्तर पर भी विस्तृत है।

कुँवर नारायण की पंक्तियाँ— "बादल के रथ दल पर, जाती निशी परियाँ अब, थोड़े से सिकुड़े धन चिन्तन की रेखाएँ हर जगनेवाले से कहना रसहीन 'आज ' जीवन से परिचित हो ।"8

इन पंक्तियों में 'निशी परियाँ' और 'बादल के रथ' जैसे बिंब पारंपरिक काव्य सौंदर्य की याद दिलाते हैं, परंतु तुरंत ही 'धन चिन्तन की रेखाएँ' इस सौंदर्य को तोड़ देती हैं। यहाँ कवि यह दिखाना चाहता है कि आधुनिक मनुष्य का जीवन अब कल्पनाशीलता या सौंदर्यबोध से संचालित नहीं, बल्कि आर्थिक दबावों से नियंत्रित है। 'रसहीन आज' केवल समय की स्थिति नहीं, बल्कि मनुष्य की आंतरिक शुष्कता का प्रतीक है। यह शुष्कता उस मनोवस्था को दर्शाती है जहाँ व्यक्ति जीवन के आनंद से कटकर केवल जीवित रहने की प्रक्रिया में सिमट जाता है।

अज्ञेय की पंक्तियाँ—

"यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा, मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो ।"9

यहाँ 'दीप' व्यक्ति की स्वतंत्र चेतना, उसकी गरिमा और उसकी आंतरिक ऊर्जा का प्रतीक है। 'अकेला' शब्द उसकी विशिष्टता को दर्शाता है, जबकि 'पंक्ति' सामूहिकता के उस दबाव का संकेत है जिसमें व्यक्ति की अलग पहचान समाप्त हो जाती है। नई कविता में यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि क्या समाज व्यक्ति को उसकी विशिष्टता के साथ स्वीकार करता है या उसे एकरूपता में ढाल देता है। इस संदर्भ में आम आदमी की पीड़ा उसकी पहचान के खो जाने की पीड़ा बन जाती है।

गिरिजाकुमार माथुर की पंक्तियाँ—

"यह जो वक्त की कोढ़ी विरासत है
कि जिनसे गल रही सब आदमीयत है
बना इन्सान लकड़ी का धुना मोहरा ।"10

यहाँ 'कोढ़ी विरासत' एक अत्यंत तीखा रूपक है, जो यह बताता है कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था स्वयं ही रोगग्रस्त है। 'आदमीयत का गलना' केवल नैतिक पतन नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं का क्षरण है। 'लकड़ी का मोहरा' बनने का अर्थ है—व्यक्ति का निष्प्राण और नियंत्रित हो जाना। यह स्थिति उस आम आदमी की है जो अपनी इच्छाओं और भावनाओं के बावजूद परिस्थितियों के हाथों संचालित होता है।

2. शहरी जीवन की समस्याएं : नई कविता में शहर केवल एक भौगोलिक स्थान नहीं, बल्कि एक मानसिक और सामाजिक संरचना है, जहाँ मनुष्य अपनी प्राकृतिकता खो देता है। यहाँ जीवन की गति तेज है, परंतु संवेदनाएँ धीमी पड़ जाती हैं।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की पंक्तियाँ—

"सुबह से शाम तक मैं
निज का प्रयत्न परवशता में बदल गया,
पेट इतना बढ़ गया
कि उसकी ही चिन्ता में-
सामने का चार पीठ पर लादना पड़ा,
आप इसे प्रगति कहें
मेरे लिए स्वावलम्बी गौरेरये का बच्चा ऊँट हो गया।"11

इन पंक्तियों में 'प्रयत्न का परवशता में बदल जाना' आधुनिक जीवन की सबसे बड़ी विडंबना है। व्यक्ति मेहनत करता है स्वतंत्र होने के लिए, लेकिन उसी मेहनत का परिणाम उसे और अधिक बंधन में डाल देता है। 'पेट' यहाँ केवल भूख का नहीं, बल्कि आवश्यकताओं और इच्छाओं के अनंत विस्तार का प्रतीक है। 'गौरेया' और 'ऊँट' का विरोधाभास यह दिखाता है कि सरलता से जटिलता की ओर यह परिवर्तन कितना अस्वाभाविक और बोझिल है।

Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 5.16/ March - April 2026 / VOL-02 ISSUE-V

अज्ञेय की पंक्तियाँ—

"साँप ! तुम सभ्य तो हुए नहीं,
नगर में बसना
या तुम्हें नहीं आया,
एक बात पूछें उत्तर दोगे ?
फिर कैसे सीखा डॅसना विष कहाँ पाया ?"12

यहाँ कवि 'साँप' के माध्यम से शहरी सभ्यता की आलोचना करता है। साँप स्वभावतः विषैला होता है, परंतु मनुष्य की 'सभ्यता' उससे भी अधिक खतरनाक हो जाती है। यह प्रश्न कि "विष कहाँ पाया?" वास्तव में आधुनिक समाज के भीतर पनप रहे स्वार्थ, हिंसा और छल का प्रश्न है। नई कविता इस छिपे हुए विष को उजागर करती है।

कुँवर नारायण की कविता—

"ये जंगली फूल जो हर साल
हल्ला बोलकर शहर में घुल जाते हैं
और राह चलते, आते जाते लोगों को
बेशर्मी से घूरते, फुसलाते हैं-
क्या इन्हें मालूम नहीं
कि शहरों में इसकी सख्त मनाही है
कि कोई किसी से बिना पहचान बोले कोई कहे कि देखो बहार आई है।"13

यहाँ 'जंगली फूल' स्वाभाविकता, स्वतंत्रता और सहजता के प्रतीक हैं। शहर में उनका 'मनाही' होना यह दर्शाता है कि आधुनिक जीवन में सहज मानवीय भावनाओं के लिए स्थान नहीं बचा है। 'बिना पहचान बोले' का निषेध सामाजिक दूरी और औपचारिकता को दर्शाता है। यह स्थिति व्यक्ति को अकेला और असंबद्ध बना देती है।

3. सामाजिक असमानता : नई कविता में सामाजिक असमानता केवल आर्थिक अंतर तक सीमित नहीं, बल्कि यह मानसिकता, व्यवहार और सामाजिक संरचना में गहराई तक व्याप्त है।

मदन वात्स्यायन की पंक्तियाँ—

"तुम गरीब पैदा हुए थे, बड़ी मुश्किल से पढ़ा लिखा
पाँच साल पहले का तुम्हारा गिडगिड़ाता चेहरा
मुझे आज भी याद है।
हाथ जोड़कर तुम आगे बढ़े, क्या इसलिए
कि मेमनों को हँसा करो।"14

इन पंक्तियों में सामाजिक स्मृति की क्रूरता दिखाई देती है। व्यक्ति चाहे कितना भी आगे बढ़ जाए, समाज उसे उसके अतीत से मुक्त नहीं होने देता। 'गिडगिड़ाता चेहरा' और 'हाथ जोड़कर आगे बढ़ना' उसकी विवशता और संघर्ष को दर्शाते हैं। 'मेमनों को हँसा करो'—यह वाक्य सामाजिक व्यंग्य का चरम है, जो यह बताता है कि उच्च वर्ग निम्न वर्ग को गंभीरता से नहीं लेता। यह असमानता व्यक्ति के आत्मसम्मान को चोट पहुँचाती है और उसे भीतर से तोड़ देती है। नई कविता इस विडंबना को उजागर कर समाज को आईना दिखाती है।

4. राजनीतिक विडम्बनाएं : नई कविता में राजनीतिक चेतना भी अत्यंत प्रखर है। यह केवल सत्ता की आलोचना नहीं करती, बल्कि उस तंत्र को भी समझने का प्रयास करती है जो व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करता है।

गिरिजाकुमार माथुर की पंक्तियाँ—

"नहीं स्वीकार उसको
कैद, नियमन, क्रूर अनुशासन
पंक्ति-चालन
फालइन"15

यहाँ 'कैद', 'नियमन' और 'अनुशासन' केवल प्रशासनिक शब्द नहीं, बल्कि दमनकारी संरचनाओं के प्रतीक हैं। 'पंक्ति-चालन' व्यक्ति को एक मशीन के पुर्जे में बदल देता है। नई कविता इस यांत्रिकता का विरोध करती है और व्यक्ति की स्वतंत्र चेतना को महत्व देती है। यहाँ एक गहरा प्रश्न यह भी है कि क्या आधुनिक लोकतंत्र वास्तव में व्यक्ति को स्वतंत्र बनाता है या उसे एक नियंत्रित ढाँचे में बाँध देता है।

5. अस्तित्व का संकट : नई कविता का सबसे जटिल और दार्शनिक पक्ष है—अस्तित्व का संकट। यह संकट व्यक्ति के भीतर उत्पन्न होता है और उसे लगातार बेचैन करता है।

Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 5.16/ March - April 2026 / VOL-02 ISSUE-V

मुक्तिबोध की पंक्तियाँ—

"कमजोर घुटनों को बार-बार मसल,
लड़खड़ाता हुआ मै
उठता हूँ दरवाजा खोलने,
चेहरे के रक्तहीन विचित्र शून्य को गहरे
पोंछता हूँ हाथ से,
अँधेरे के ओर छोर टटोल टटोल कर
बढ़ता हूँ आगे
पैरों से महसूस करता हूँ दुनिया,
मस्तक अनुभव करता है, आकाश,
दिल में तड़पता है अँधेरे का अन्दाज
आँखें ये तथ्य को सूँघती-सी लगती
केवल शक्ति है स्पर्श की गहरी।"16

इन पंक्तियों में 'लड़खड़ाता हुआ मैं' आधुनिक मनुष्य की अस्थिरता का प्रतीक है। 'अँधेरा' यहाँ अज्ञान, भय और अनिश्चितता का प्रतीक है। 'पैरों से महसूस करना' और 'आँखों से सूँघना'—यह इंद्रियों का उलटाव है, जो यह दर्शाता है कि सामान्य अनुभव की संरचना टूट चुकी है। यह स्थिति अस्तित्ववाद की उस अवधारणा से जुड़ती है जहाँ व्यक्ति अपने होने के अर्थ की खोज में संघर्ष करता है। नई कविता इस संघर्ष को न केवल चित्रित करती है, बल्कि उसे अनुभव कराने की क्षमता भी रखती है।

यह कविता जीवन की कठोर सच्चाइयों से मुँह नहीं मोड़ती, बल्कि उन्हें स्वीकार कर उनमें अर्थ खोजती है। इन सभी संदर्भों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि नई कविता केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं, बल्कि सामाजिक और वैचारिक चेतना का सशक्त माध्यम है। इसमें व्यक्ति की पीड़ा, समाज की विसंगतियाँ और अस्तित्व की जटिलताएँ एक साथ अभिव्यक्त होती हैं। इस प्रकार नई कविता अपने समय का सजीव दस्तावेज बनकर उभरती है, जो न केवल यथार्थ को चित्रित करती है, बल्कि उसे समझने और प्रश्न करने की प्रेरणा भी देती है। आम आदमी की पीड़ा, शहरी जीवन की विसंगतियाँ, सामाजिक असमानता, राजनीतिक विडंबनाएँ और अस्तित्व का संकट—ये सभी पहलू मिलकर नई कविता को एक सशक्त और प्रासंगिक साहित्यिक आंदोलन बनाते हैं। यह कविता केवल साहित्य नहीं, बल्कि समाज का दर्पण है, जिसमें हम अपने समय की सच्चाइयों को स्पष्ट रूप से देख सकते हैं।

संदर्भ :

1). सोवियत लिटरेचर वाल्यूम 3 बोरिस सुखौव, पृ. 179
2). कल्पना -जनवरी 56 से जून 57 की नौ किस्तों में विवेचन
3). हिंदी साहित्य बीसवीं शताब्दी - नंद दुलारे बाजपेयी
4). आधुनिक हिंदी कविता में बिंब विधान-आज का भारतीय साहित्य उद्धरण- केदारनाथ सिंह, पृ. 310
5). त्रिशंकु - अज्ञेय, पृ. 29
6). नया हिंदी काव्य - शिवकुमार मिश्र, पृ. 28
7). नव उपनिवेश में कविता - डॉ. के. के. गिरीश कुमार, पृ. 77
8). चक्रव्यूह - कुंवर नारायण, पृ. 168
9). बावरा अहेरी, दीप अकेला - अज्ञेय
10). शीलापंख चमकीले - गिरिजाकुमार माथुर, पृ. 23
11). तीसरा सप्तक सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, पृ. 357
12). इंद्रधनुष रौंदे हुए – अज्ञेय, पृ. 29
13). बाहर आई है - कुंवर नारायण, पृ. 63
14). तीसरा सप्तक - मदन वात्स्यायन, पृ. 167,168
15). शीलापंख चमकीले - गिरिजा कुमार माथुर, पृ. 28
16). चांद का मुंह टेढ़ा है - मुक्तिबोध, पृ. 30